रहीम-दोहे

9

1 : ध्यान और वन्दना

जेहि 'रहीम' मन आपनो कीन्हो चारु चकोर।
निसि–वासर लाग्यो रहे, कृष्ण चन्द्र की ओर।।1।।

जिस किसी ने अपने मन को सुन्दर चकोर बना लिया, वह नित्य निरन्तर, रात और दिन, श्रीकृष्णरूपी चन्द्र की ओर टकटकी लगाकर देखता रहता है।
ह्यसन्दर्भ–चन्द्र का उदय रात को होता है, पर यहाँ वासर अर्थात दिन भी आया है, अतः वासर का आशय है नित्य निरन्तर से।ह

'रहिमन' कोऊ का करै, ज्वारी, चोर, लबार।
जो पत–राखनहार है, माखन–चाखनहार।।2।।

जिसकी लाज रखनेवाले माखन के चाखनहार अर्थात रसास्वादन लेनेवाले स्वयं श्रीकृष्ण हैं, उसका कौन क्या बिगाड सकता है?
न तो कोई जुआरी उसे हरा सकता है, न कोई चोर उसकी किसी वस्तु को चुरा सकता है और न कोई लफंगा उसके साथ असभ्यता का व्यवहार कर सकता है।
ह्यसन्दर्भ–जुआरी का आशय है यहां शकुनि से, जिसने युधिष्ठर को धूर्ततापूर्वक जुए में बुरी तरह हरा दिया था।

10

ब्रह्मा द्वारा जब ग्वाल–बालों की गांए चुरा ली गयीं, तब श्रीकृष्ण ने उनकी रक्षा की थी।
इसी प्रकार दुष्ट दुःशासन द्वारा साडी खींचने पर आर्त द्रौपदी की लाज श्रीकृष्ण ने बचाई थी।ह

11

2 : अनन्यता

'रहिमन' गली है सांकरी, दूजो नहि ठहराहि।
आपु अहै, तो हरि नहीं, हरि, तो आपुन नाहि।।1।।

जबकि गली सांकरी है, तो उसमें एक साथ दो जने कैसे जा सकते है?
यदि तेरी खुदी ने सारी ही जगह घेर ली तो हरि के लिए वहां कहां ठौर है?
और, हरि उस गली में यदि आ पैठे तो फिर साथ–साथ खुदी का गुजारा वहां कैसे होगा?
मन ही वह प्रेम की गली है, जहां अहंकार और भगवान् एक साथ नहीं गुजर सकते, एक साथ नहीं रह सकते।

अमरबेलि बिनु मूल की, प्रतिपालत है ताहि।
'रहिमन' ऐसे प्रभुहि तजि, खोजत फिरिए काहि।।2।।

अमरबेलि में जड नहीं होती, बिलकुल निर्मूल होती है वहल परन्तु प्रभु

उसे भी पालते–पोसते रहते हैं।
ऐसे प्रतिपालक प्रभु को छोडकर और किसे खोजा जाय?
जाल परे जल जात बहि, तजि मीनन को मोह।
'रहिमन' मछरी नीर को तऊ न छाँडति छोह।।3।।

12
धन्य है मीन की अनन्य भावनाॐ
सदा साथ रहने वाला जल मोह छोडकर उससे विलग हो जाता है, फिर भी मछली अपने प्रिय का परित्याग नहीं करती उससे बिछुडकर तडप–तडपकर अपने प्राण दे देती है।
धनि 'रहीम' गति मीन की, जल बिछुरत जिय जाय।
जियत कंज तजि अनत बसि, कहा भौर को भाय।।4।।
धन्य है मछली की अनन्य प्रीतिॐ
प्रेमी से विलग होकर उसपर अपने प्राण न्यौछावर कर देती है।
और, यह भ्रमर, जो अपने प्रियतम कमल को छोडकर अन्यत्र उड जाता हैॐ
प्रीतम छबि नैनन बसी, पर–छबि कहां समाय।
भरी सराय 'रहीम' लखि, पथिक आप फिर जाय।।5।।
जिन आँखों में प्रियतम की सुन्दर छबि बस गयी, वहां किसी दूसरी छबि को कैसे ठौर मिल सकता है?
भरी हुई सराय को देखकर पथिक स्वयं वहां से लौट जाता है।
ह्यमन–मन्दिर में जिसने भगवान को बसा लिया, वहां से मोहिनी माया, कहीं ठौर न पाकर, उल्टे पांव लौट जाती है।ह्न

13
3 : प्रेम
'रहिमन' पैडा प्रेम को, निपट सिलसिली गैल।
बिलछत पांव पिपीलिको, लोग लदावत बैल।।1।।
प्रेम की गली में कितनी ज्यादा फिसलन हैॐ
चींटी के भी पैर फिसल जाते हैं इस पर।
और, हम लोगों को तो देखो, जो बैल लादकर चलने की सोचते हैॐ
ह्यदुनिया भर का अहंकार सिर पर लाद कर कोई कैसे प्रेम के विकट मार्ग पर चल सकता है? वह तो फिसलेगा ही।ह्न
'रहिमन' धागा प्रेम को, मत तोडो चटकाय।
टूटे से फिर ना मिले, मिले गांठ पड जाय।।2।।
बडा ही नाजुक है प्रेम का यह धागा।
झटका देकर इसे मत तोडो, भाईॐ
टूट गया तो फिर जुडेगा नहीं, और जोड भी लिया तो गांठ पड जायगी।
ह्यप्रिय और प्रेमी के बीच दुराव आ जायगा।ह्न
'रहिमन' प्रीति सराहिये, मिले होत रंग दून।
ज्यों जरदी हरदी तजै, तजै सफेदी चून।।3।।

14
सराहना ऐसे ही प्रेम की की जाय जिसमें अन्तर न रह जाय।
चूना और हल्दी मिलकर अपना–अपना रंग छोड देते है।
ह्यन दृष्टा रहता है और न दृश्य, दोनों एकाकार हो जाते हैं।ह्न
कहा करौं वैकुण्ठ लै, कल्पबृच्छ की छांह।
'रहिमन' ढाक सुहावनो, जो गल पीतम–बाँह। ।4। ।
वैकुण्ठ जाकर कल्पवृक्ष की छांहतले बैठने में रक्खा क्या है,
यदि वहां प्रियतम पास न होॐ
उससे तो ढाक का पेड ही सुखदायक है, यदि उसकी छांह में प्रियतम के साथ
गलबाँह देकर बैठने को मिले।
जे सुलगे ते बुझ गए, बुझे ते सुलगे नाहि।
'रहिमन' दाहे प्रेम के, बुझि–बुझिकैं सुलगाहि। ।5। ।
आग में पडकर लकडी सुलग–सुलगकर बुझ जाती है, बुझकर वह फिर सुलगती नहीं।
लेकिन प्रेम की आग में दग्ध हो जाने वाले प्रेमीजन बुझकर भी सुलगते रहते है।
ह्यऐसे प्रेमी ही असल में 'मरजीवा' हैं।ह्न
टूटे सुजन मनाइए, जो टूटे सौ बार।
'रहिमन' फिर–फिर पोइए, टूटे मुक्ताहार। ।6। ।

15
अपना प्रिय एक बार तो क्या, सौ बार भी रूठ जाय, तो भी उसे मना लेना चाहिए।
मोतियों के हार टूट जाने पर धागे में मोतियों को बार–बार पिरो लेते हैं नॐ
यह न 'रहीम' सराहिये, देन–लेन की प्रीति।
प्रानन बाजी राखिये, हार होय कै जीत। ।7। ।
ऐसे प्रेम को कौन सराहेगा, जिसमें लेन–देन का नाता जुडा होॐ
प्रेम क्या कोई खरीद–फरोख्त की चीज है?
उसमें तो लगा दिया जाय प्राणों का दांव, परवा नहीं कि हार हो या जीतॐ
'रहिमन' मैन–तुरंग चढि, चलिबो पावक माहि।
प्रेम–पंथ ऐसो कठिन, सब कोउ निबहत नाहि। ।8। ।
प्रेम का मार्ग हर कोई नहीं तय कर सकता।
बडा कठिन है उस पर चलना, जैसे मोम के बने घोडे पर सवार हो आग पर चलना।
वहै प्रीत नहिं रीति वह, नहीं पाछिलो हेत।
घटत–घटत 'रहिमन' घटै, ज्यों कर लीन्हे रेत। ।9। ।
कौन उसे प्रेम कहेगा, जो धीरे–धीरे घट जाता है?

16
प्रेम तो वह, जो एक बार किया, तो घटना कैसाॐ
वह रेत तो है, नहीं, जो हाथ में लेने पर छन–छनकर गिर जाय।
ह्यप्रीति की रीति बिलकुल ही निराली है।ह्न

17

4 : राम–नाम

गहि सरनागति राम की, भवसागर की नाव।
'रहिमन' जगत–उधार को, और न कछू उपाय।।1।।
संसार–सागर के पार ले जानेवाली नाव राम की एक शरणागति ही है।
संसार के उद्धार पाने का दूसरा कोई उपाय नहीं, कोई और साधन नहीं।
मुनि–नारी पाषान ही, कपि, पशु, गुह मातंग।
तीनों तारे रामजू, तीनों मेरे अंग।।2।।

राम ने पाषाणी अहल्या को तार दिया, वानर पशुओं को पार कर दिया और
नीच जाति के उस गुह निषाद को भीॐ
ये तीनों ही मेरे अंग–अंग में बसे हुए हैं––
मेरा हृदय ऐसा कठोर है, जैसा पाषाण।
मेरी वृत्तियां, मेरी वासनाएं पशुओं की जैसी हैं, और मेरा आचरण नीचतापूर्ण है।
तब फिर, तुझे तारने में तुम्हे संकोच क्या हो रहा है, मेरे रामॐ

18

राम नाम जान्यो नहीं, भई पूजा में हानि।
कहि 'रहीम' क्यों मानिहैं, जम के किंकर कानि।।3।।
राम–नाम की महिमा मैंने पहचानी नहीं और पूजा–पाठ करता रहा। बात बिगडती ही गयी।
यमदूत मेरी एक नहीं सुनेंगें, मेरी लाज नहीं बचेगी।
राम–नाम जान्यो नहीं, जान्यो सदा उपाधि।
कहि 'रहिम' तिहि आपुनो, जनम गंवायो बाधि।।4।।
राम–नाम का माहात्म्य तो मैंने जाना नहीं और जिसे जानने का जतन किया, वह सारा
व्यर्थ था।
राम का ध्यान तो किया नहीं और विषय–वासनाओं से सदा लिपटा रहा।
ह्यपशु नीरस खली को तो बडे स्वाद से खाते हैं, पर गुड की डली जबरदस्ती बेमन से गले
के नीचे उतारते हैं।ह

19

5 : मित्र

मथत–मथत माखन रहे, दही मही बिलगाय।
'रहिमन' सोई मीत है, भीर परे ठहराय।।1।।
सच्चा मित्र वही है, जो विपदा में साथ देता है।
वह किस काम का मित्र, जो विपत्ति के समय अलग हो जाता है? मक्खन मथते–मथते रह जाता
है, किन्तु मट्ठा दही का साथ छोड देता है,
जिहि 'रहीम' तन मन लियो, कियो हिए बिच भौन।
तासों दुःख–सुख कहन की, रही बात अब कौन।।2।।
जिस प्रिय मित्र ने तन और मन पर कब्जा कर रक्खा है और हृदय मे जो सदा के लिए

बस गया है, उससे सुख और दुःख कहने की अब कौन–सी बात बाकी रह गयी है?
(दोनों के तन एक हो गये, और मन भी दोनों के एक ही।ह

जे गरीब सों हित करें, धनि 'रहीम' ते लोग।
कहा सुदामा बापुरो, कृष्ण–मिताई–जोग।।3।।

धन्य हैं वे, जो गरीबों से प्रीति जोडते हैॐ
बेचारा सुदामा क्या द्वारिकाधीश कृष्ण की मित्रता के योग्य था?

20

6 : उपालम्भ

जो 'रहीम' करबौ हुतो, ब्रज को इहै हवाल।
तो काहे कर पर धर्यौ, गोवर्धन गोपाल।।1।।

हे गोपाल, ब्रज को छोडकर यदि तुम्हें उसका यही हाल करना था, तो उसकी रक्षा करने के लिए अपने हाथ पर गोवर्धन पर्वत को क्यों उठा लिया था?
(प्रलय जैसी घनघोर वर्षा से व्रजवासियों को त्राण देने के लिए पर्वत को छत्र क्यों बना लिया था?)

हरि'रहीम' ऐसी करी, ज्यों कमान सर पूर।
खेंचि आपनी ओर को, डारि दियौ पुनि दूर।।2।।

जैसे धनुष पर चढाया हुआ तीर पहले तो अपनी तरफ खींचा जाता है, और फिर उसे छोडकर बहुत दूर फेंक देते हैं।
वैसे ही हे नाथॐ पहले तो आपने कृपाकर मुझे अपनी और खींच लिया।
और फिर इस तरह दूर फेंक दिया कि मैं दर्शन पाने को तरस रहा हूँ।

21

'रहिमन' कीन्ही प्रीति, साहब को भावै नहीं।
जिनके अगनित मीत, हमें गरीबन को गनैं।।3।।

मैंने स्वामी से प्रीति जोडी, पर लगता है कि उसे वह अच्छी नहीं लगी।
मैं सेवक तो गरीब हूं,
और, स्वामी के अगणित मित्र हैं।
ठीक ही है, असंख्य मित्रों वाला स्वामी गरीबों की तरफ क्यों ध्यान देने लगाॐ

22

7 : कितना बडा आश्चर्य हैॐ

बिन्दु में सिन्धु समान, को अचरज कासों कहैं।
हेरनहार हिरान, 'रहिमन' आपुनि आपमें।।1।।

अचरज की यह बात कौन तो कहे और किससे कहेः
लो, एक बूँद में सारा ही सागर समा गयाॐ
जो खोजने चला था, वह अपने आप में खो गया।
ह्यखोजनहारी आत्मा और खोजने की वस्तु परमात्मा।
भ्रम का पर्दा उठते ही न खोजनेवाला रहा और न वह, कि जिसे खोजा जाना था।
दोनों एक हो गए।

अचरज की बात कि आत्मा में परमात्मा समा गया।
समा क्या गया, पहले से ही समाया हुआ था।हृ
'रहिमन' बात अगम्य की, कहनि–सुननि की नाहिं।
जे जानत ते कहत नहिं, कहत ते जानत नाहिं।।2।।
जो अगम है उसकी गति कौन जाने?
उसकी बात न तो कोई कह सकता है, और न वह सुनी जा सकती है।
जिन्होंने अगम को जान लिया, वे उस ज्ञान को बता नहीं सकते, और जो इसका वर्णन करते है, वे असल में उसे जानते ही नहीं।

8 : चेतावनी

सदा नगारा कूच का, बाजत आठौं जाम।
'रहिमन' या जग आइकै, को करि रहा मुकाम।।1।।
आठों ही पहर नगाडा बजा करता है
इस दुनिया से कूच कर जाने का।
जग में जो भी आया, उसे एक–न–एक दिन कूच करना ही होगा।
किसी का मुकाम यहां स्थायी नहीं रह पाया।
सौदा करौ सो कहि चलो, ' रहिमन' याही घाट।
फिर सौदा पैहो नहीं, दूरि जात है बाट।।2।।
दुनिया की इस हाट में जो भी कुछ सौदा करना है,
वह कर लो, गफलत से काम नहीं बनेगा।
रास्ता वह बडा ही लम्बा है, जिस पर तुम्हे चलना होगा।
इस हाट से जाने के बाद न तो कुछ खरीद सकोगे, और न कुछ बेच सकोगे।
'रहिमन' कठिन चितान तै, चिता को चित चैत।
चिता दहति निर्जीव को, चिन्ता जीव–समेत।।3।।

चिन्ता यह चिता से भी भंयकर है।
सो तू चेत जा।
चिता तो मुर्दे को जलाती है, और यह चिन्ता जिन्दा को ही जलाती रहती है।
कागज को सो पूतरा, सहजहि में घुल जाय।
'रहिमन' यह अचरज लखो, सोऊ खैंचत जाय।।4।।
शरीर यह ऐसा हैं, जैसे कागज का पुतला, जो देखते–देखते घुल जाता है।
पर यह अचरज तो देखो कि यह साँस लेता है, और दिन–रात लेता रहता हैं।
तै 'रहीम' अब कौन है, एतो खैंचत बाय।
जस कागद को पूतरा, नमी माहि घुल जाय।।5।।
कागज के बने पुतले के जैसा यह शरीर है।
नमी पाते ही यह गल–घुल जाता है।
समझ में नहीं आता कि इसके अन्दर जो साँस ले रहा है, वह आखिर कौन है?

'रहिमन' ठठरि धूरि की, रही पवन ते पूरि।
गाँठि जुगति की खुल गई, रही धूरि की धूरि।।6।।
यह शरीर क्या है, मानो धूल से भरी गठरी।
गठरी की गाँठ खुल जाने पर सिर्फ धूल ही रह जाती है।
खाक का अन्त खाक ही है।

25

9 : लोक–नीति

'रहिमन' वहां न जाइये, जहां कपट को हेत।
हम तो ढारत ढेकुली, सींचत अपनो खेत।।1।।
ऐसी जगह कभी नहीं जाना चाहिए, जहां छल–कपट से कोई अपना मतलब निकालना चाहे।
हम तो बडी मेहनत से पानी खींचते हैं कुएं से ढेंकुली द्वारा, और कपटी आदमी बिना मेहनत के ही अपना खेत सींच लेते हैं।
सब कोऊ सबसों करें, राम जुहार सलाम।
हित अनहित तब जानिये, जा दिन अटके काम।।2।।
आपस में मिलते हैं तो सभी सबसे राम–राम, सलाम और जुहार करते हैं।
पर कौन मित्र है और कौन शत्रु, इसका पता तो काम पडने पर ही चलता है।
तभी, जबकि किसीका कोई काम अटक जाता है।
खीरा को सिर काटिकै, मलियत लौन लगाय।
'रहिमन' करुवे मुखन की, चहिए यही सजाय।।3।।
चलन है कि खीरे का ऊपरी सिरा काट कर उस पर नमक मल दिया जाता है।
कडुवे वचन बोलनेवाले की यही सजा है।

26

जो 'रहीम' ओछो बढै, तो अति ही इतराय।
प्यादे से फरजी भयो, टेढो–टेढो जाय।।4।।
कोई छोटा या ओछा आदमी, अगर तरक्की कर जाता हैं, तो मारे घमंड के बुरी तरह इतराता फिरता है।
देखो न, शतरंज के खेल में प्यादा जब फरजी बन जाता है, तो वह टेढी चाल चलने लगता है।
'रहिमन' नीचन संग बसि, लगत कलंक न काहि।
दूध कलारिन हाथ लखि, सब समुझहि मद ताहि।।5।।
नीच लोगों का साथ करने से भला कौन कलंकित नहीं होता हैॐ
कलारिनह्यशराब बेचने वालीह् के हाथ में यदि दूध भी हो, तब भी लोग उसे शराब ही समझते हैं।
कौन बडाई जलधि मिलि, गंग नाम भो धीम।
केहि की प्रभुता नहि घटी पर–घर गये 'रहीम'।।6।।
गंगा की कितनी बडी महिमा है, पर समुद्र में पैठ जाने पर उसकी महिमा घट जाती है।
घट क्या जाती है, उसका नाम भी नहीं रह जाता।
सो, दूसरे के घर, स्वार्थ लेकर जाने से, कौन ऐसा है, जिसकी प्रभुता या बडप्पन न

घट गया हो?

27

खरच बढ्यो उद्यम घट्यो, नृपति निठुर मन कीन।
कहु 'रहीम' कैसे जिए, थोरे जल की मीन।।7।।
राजा भी निठुर बन गया, जबकि खर्च बेहद बढ गया और उद्यम मे कमी आ गयी।
ऐसी दशा में जीना दूभर हो जाता है, जैसे जरा से जल में मछली का जीना।
जैसी जाकी बुद्धि है, तैसी कहै बनाय।
ताको बुरो न मानिये, लेन कहां सूँ जाय।।8।।
जिसकी जैसी जितनी बुद्धि होती है, वह वैसा ही बन जाता है, या बना-बना कर वैसी ही बात करता है।
उसकी बात का इसलिए बुरा नहीं मानना चाहिए।
कहां से वह सम्यक बुद्धि लेने जाय?
जिहि अंचल दीपक दुर्यो, हन्यो सो ताही गात।
'रहिमन' असमय के परे, मित्र सत्रु ह्वै जात।।9।।
साडी के जिस अंचल से दीपक को छिपाकर एक स्त्री पवन से उसकी रक्षा करती है, दीपक उसी अंचल को जला डालता है।
बुरे दिन आते हैं, तो मित्र भी शत्रु हो जाता है।
'रहिमन' अँसुवा नयन ढरि, जिय दुख प्रकट करेइ।
जाहि निकारो गेह तें, कस न भेद कहि देइ।।10।।
आंसू आंखों में ढुलक कर अन्तर की व्यथा प्रकट कर देते हैं।
घर से जिसे निकाल बाहर कर दिया, वह घर का भेद दूसरों से क्यों न कह देगा?

28

' रहिमन' अब वे बिरछ कह, जिनकी छाँह गंभीर।
बागन बिच-बिच देखिअत, सेंहुड कुंज करीर।।11।।
वे पेड आज कहां, जिनकी छाया बडी घनी होती थीॐ
अब तो उन बागों में कांटेदार सेंहुड, कंटीली झाडियाँ और करील देखने में आते हैं।
'रहिमन' जिव्हा बावरी, कहिगी सरग पताल।
आपु तो कहि भीतर रही, जूती खात कपाल।।12।।
क्या किया जाय इस पगली जीभ का, जो न जाने क्या-क्या उल्टी-सीधी बातें स्वर्ग और पाताल तक की बक जाती हैॐ
खुद तो कहकर मुहँ के अन्दर हो जाती है, और बेचारे सिर को जूतियाँ खानी पडती हैॐ
'रहिमन' तब लगि ठहरिए, दान, मान, सनमान।
घटत मान देखिय जबहि, तुरतहि करिय पयान।।13।।
तभी तक वहां रहा जाय, जब तक दान, मान और सम्मान मिले।
जब देखने में आये कि मान-सम्मान घट रहा है, तो तत्काल वहां से चल देना चाहिए।
'रहिमन' खोटी आदि को, सो परिनाम लखाय।
जैसे दीपक तम भखै, कज्जल वमन कराय।।14।।

जिसका आदि बुरा, उसका अन्त भी बुरा।
दीपक आदि में अन्धकार का भक्षण करता है, तो अन्त में वमन भी वह कालिख का ही करता हैं।
जैसा आरम्भ, वैसा ही परिणाम।

`रहिमन' रहिबो वह भलो, जौं लौं सील समुच।
सील ढील जब देखिए, तुरंत कीजिए कूच ।।**15**।।
तभी तक कहीं रहना उचित हैं, जब तक की वहाँ शील और सम्मान बना रहे । शील–सम्मान में ढील आने पर उसी वक्त वहाँ से चल देना चाहिए ।
धन थोरो, इज्जत बडी, कहि`रहीम' का बात।
जैसे कुल की कुलबधू, चिथडन माहि समात ।।**16**।।
पैसा अगर थोडा है, पर इज्जत बडी है, तो यह कोइ निन्दनीय बात नहीं । खानदानी घर की स्त्री चिथडे पहनकर भी अपने मान की रक्षा कर लेती हैं
धनि`रहीम' जल पंक को, लघु जिय पियत अघाय ।
उदधि बडाई कौन हैं, जगत पियासो जाय ।।**17**।।
कीचड का भी पानी धन्य हैं, जिसे पीकर छोटे–छोटे जीव–जन्तु भी तृप्त हो जाते हैं। उस समुन्द्र की क्या बडाई, जहां से सारी दुनिया प्यासी ही लौट जाती हैं **?**
अनुचित बचत न मानिए, जदपि गुरायसु गाढि ।
हैं`रहीम' रघुनाथ ते, सुजस भरत को बाढि ।।**18**।।

बडो की भी ऐसी आज्ञा नहीं माननी चाहिए, जो अनुचित हो। पिता का वचन मानकर राम वन को चले गए । किन्तु भरत ने बडो की आज्ञा नहीं मानी, जबकी उनको राज करने को कहा गया था फिर भी राम के यश से भरत का यश महान् माना जाता हैं ।
ह्यतुलसीदास जी ने बिल्कुल सही कहा हैं कि`जग जपु राम, राम जपु जेही' अर्थात् संसार जहां राम का नाम का जाप करता हैं, वहां राम भरत का नाम सदा जपते रहते हैं ।।
अब`रहीम' मुसकिल पडी, गाढे दोऊ काम ।
सांचे से तो जग नहीं, झुठे मिलै न राम ।।**19**।।
बडी मुश्किल में आ पडे कि ये दोनों ही काम बडे कठिन हैं । सच्चाई से तो दुनिया दारी हासिल नही होती हैं, लोग रीझते नही हैं, और झूठ से राम की प्राप्ति नहीं होती हैं । तो अब किसे छोडा जाए, और किससे मिला जाए **?**
आदर घटै नरेस ढिग बसे रहै कछु नाहीं ।
जो`रहीम' कोटिन मिलै, धिक जीवन जग माहीं ।।**20**।।
राजा के बहुत समीप जाने से आदर कम हो जाता है। और साथ रहने से कुछ भी मिलने का नही। बिना आदर के करोडों का धन मिल जाए, तो संसार में धिक्कार हैं ऐसे जीवन को ॐ

आप न काहू काम के, डार पात फल फूल।
औरन को रोकत फिरै, 'रहिमन' पेड बबूल।।21।।

बबूल का पेड खुद अपने लिए भी किस काम का?
न तो डालें हैं, न पत्ते हैं और न फल और फूल ही|
दूसरों को भी रोक लेता है, उन्हें आगे नहीं बढने देता|

एकै साधे सब सधै, सब साधे सब जाय|
'रहिमन' मूलहि सींचिबो, फूलहि फलहि अघाय||22||

एक ही काम को हाथ में लेकर उसे पूरा कर लो|
सबमें अगर हाथ डाला, तो एक भी काम बनने का नहीं|
पेड की जड को यदि तुमने सींच लिया, तो उसके फूलों और फलों को पूर्णतया प्राप्त कर लोगे|

अन्तर दावा लगि रहै, धुआं न प्रगटै सोय|
के जिय जाने आपनो, जा सिर बीती होय||23||

आग अन्तर में सुलग रही है, पर उसका धुआं प्रकट नहीं हो रहा है|
जिसके सिर पर बीतती है, उसीका जी उस आग को जानता है|
कोई दूसरे उस आग का यानी दुःख का मर्म समझ नहीं सकते|

कदली, सीप, भुजंग मुख, स्वाति एक गुन तीन|
जैसी संगति बैठिए, तैसोई फल दीन||24||

स्वाती नक्षत्र की वर्षा की बूँद तो एक ही हैं, पर उसके गुण अलग–अलग तीन तरह के देखे जाते है ॐ

कदली में पडने से, कहते है कि, उस बूंद का कपूर बन जाता है ॐ

ओर, अगर सीप में वह पडी तो उसका मोती हो जाता है ॐ

साप के मुहँ के में गिरने से उसी बूँद का विष बन जाता है ॐ

जैसी संगत में बैठोगे, वेसा ही परिणाम उसका होगा ॐ
ह्यह कवियों की मान्यता है, ओर इसे॒कवि समय' कहते है ॐह्
कमला थिर न॒रहिम' कहि, यह जानत सब कोय ॐ
पुरूष पुरातन की वधू, क्यों न चंचला होय ॐॐ25ॐॐ
लक्ष्मी कहीं स्थिर नहीं रहती ॐ
मूढ जन ही देखते है कि वह उनके घर में स्थिर होकर बेठ गइ है |
लक्ष्मी प्रभु की पत्नी है, नारायण की अर्धांगिनी है|
उस मूर्ख की फजीहत कैसे नहीं होगी, जो लक्ष्मी को अपनी कहकर या अपनी मानकर चलेगा|
करत निपुनई गुन बिना, 'रहिमन' निपुन हजूर|
मानहुं टेरत बिटप चढि, मोहि समान को कूर||26||
बिना ही निपुणता और बिना ही किसी गुण के जो व्यक्ति बुद्धिमानों के आगे डींग मारता फिरता है|

वह मानो वृक्ष पर चढकर घोषणा करता है निरी अपनी मूर्खता की|

33

कहि 'रहिम' संपति सगे, बनत बहुत बहु रीति|
बिपति–कसौटी जे कसे, सोई सांचे मीत||27||
धन सम्पत्ति यदि हो, तो अनेक लोग सगे–संबंधी बन जाते है|
पर सच्चे मित्र तो वे ही है, जो विपत्ति की कसौटी पर कसे जाने पर खरे उतरते है|
सोना सच्चा है या खोटा, इसकी परख कसौटी पर घिसने से होती है| इसी प्रकार विपत्ति में जो हर तरह से साथ देता हैं, वही सच्चा मित्र है|
कहु 'रहीम' कैसे निभै, बेर केर को संग|
वे डोलत रस आपने, उनके फाटत अंग||28||
बेर और केले के साथ–साथ कैसे निभाव हो सकता है ? बेर का पेड तो अपनी मौज में डोल रहा है, पर उसके डोलने से केले का एक–एक अंग फटा जा रहा है |
दुर्जन की संगती में सज्जन की ऐसी ही गति होती है |

कहु 'रहीम' कैतिक रही, कैतिक गई बिहाय |
माया ममता मोह परि, अन्त चले पछीताय ||29||

आयु अब कितनी रह गयी है, कितनी बीत गई है | अब तो चेत जा | माया में, ममता में और मोह में फँसकर अन्त में फछतावा ही साथ लेकर तू जायगा |

काह कामरी पामडी, जाड गए से काज |
`रहिमन' भूख बुताइए, कैस्यो मिले अनाज ||30||

34

क्या तो कम्बल और क्या मखमल का कपडा ॐ असल में काम का तो वही है, जिससे कि जाडा चला जाय | खाने को चाहे जैसा अनाज मिल जाय, उससे भूख बुझनी चाहिए |
(तुलसीदासजी ने भी यही बात कही है कि ल–
का भाषा, का संस्कृत, प्रेम चाहिए साँच |
काम जो आवै कामरी, का लै करै कमाच ||)

कैसे निबहै निबल जन, करि सबलन सों बैर |
`रहिमन' बसि सागर विषे, करत मगर सों बैर ||31||

सहजोर के साथ बैर बिसाहने से कमजोर का कैसे निबाह होगा ? सबल दबोच लेगा निर्बल को|
समुद्र के किनारे रहकर यह तो मगर से बैर बाँधना हुआ |

कोउ 'रहीम' जहि काहुके, द्वार गए पछीताय |
संपति के सब जात हैं, बिपति सबै ले जाय ||32 ||

किसी के दरवाजे पर जाकर पधताना नहीं चाहिए | धनी के द्वार तो सभी जाते हैं |
यह विपत्ति कहाँ–कहाँ नहीं ले जाती है ॐ

खैर , खुन, खाँसी, खुशी, बैर, प्रीति, मद–पान |
`रहिमन' दाबे ना दबै, जानत सकल जहान ||35||

दिनिया जानती है कि ये चीजें दबाने से नहीं दबतीं, छिपाने से नहीं छिपतीं ः खैर

अर्थात कुशल , खून ह्यहत्याह, खाँसी, खुशी बैर, प्रीति और मदिरा–पान |

35
[खैर कत्थे को भी कहते हैं, जिसका दाग कपडे पर साफ दीख जाता है |]

गरज आपनी आप सों , `रहिमन' कही न जाय |
जैसे कुल की कुलबधू, पर घर जात लजाय ||34 ||

अपनी गरज की बात किसी से कही नहीं जा सकती | इज्जतदार आदमी ऐसा करते हुए शर्मिन्दा होता है, अपनी गरज को वह मन में ही रखता है | जैसे कि किसी कुलवधू को पराये घर में जाते हुए शर्म आती है |

छिमा बडेन को चाहिए , छोटन को उतपात |
का`रहीम' हरि को घट्यो, जो भृगु मारी लात ||35||

बडे आदमियों को क्षमा शोभा देती है | भृगु मुनि ने विष्णु को लात मारदी, तो उससे उनका आदर कहाँ कम हुआ ?

जब लगि वित्त न आपुने , तब लगि मित्र न होय |
`रहिमन' अंबुज अंबु बिनु, रवि नाहिन हित होय ||36||

तब तक कोई मित्रता नहीं करता, जबतक कि अपने पास धन न हो | बिना जल के सूर्य भी कमल से अपनी मित्रता तोड लेता है |

जे`रहीम' बिधि बड किए, को कहि दूषन काढि |
चंद्र दूबरो कूबरो, तऊ नखत तें बाढि ||37||

विधाता ने जिसे बडाई देकर बडा बना दिया, उसमें दोष कोई निकाल नहीं सकता |

चन्द्रमा सभी नक्षत्रों से अधिक प्रकाश देता है, भले ही वह दुबला और कूबडा हो |

जैसी परै सो सहि रहे , कहि`रहीम' यह देह |
धरती ही पर परग है , सीत, घाम औ' मेह ||38||

जो कुछ भी इस देह पर आ बीते, वह सब सहन कर लेना चाहिए | जैसे, जाडा, धूप और वर्षा पडने पर धरती सहज ही सब सह लेती है | सहिष्णुता धरती का स्वाभाविक गुण है |

जो घर ही में गुसि रहे, कदली सुपत सुडील |
तो`रहीम' तिनते भले, पथ के अपत करील ||39||

केले के सुन्दर पत्ते होते हैं और उसका तना भी वैसा ही सुन्दर होता है | किन्तु वह घर के अन्दर ही शोभित होता है | उससे कहीं अच्छे तो करील हैं , जिनके न तो सुन्दर पत्ते हैं और न जिनका तन ही सुन्दर है, फिर भी करील रास्ते पर होने के कारण पथिकों को अपनी ओर खींच लेता है |

जो बडेन को लघु कहै, नहि`रहीम' घटि जाहि |
गिरिधर मुरलीधर कहे, कछु दुख मानत नाहि ||40 ||

बडे को यदि कोई छोटा कह दे, तो उसका बडप्पन कम नहीं हो जाता | गिरिधर श्रीकृष्ण मुरलीधर कहने पर कहाँ बुरा मानते हैं ?

जो`रहीम' गति दीप की, कुल कपूत गति सोय |
बारे इजियारो लगे , बढे अंधेरो होय ||41||

दीपक की तथा कुल में पैदा हुए कुपूत की गति एक–सी है | दीपक जलाया तो उजाला हो गया और बुझा दिया तो अन्धेरा–ही–अंधेरा |
कुपूत बचपन में तो फ–यारा लगता है और बडा होने पर बुरी करतूतों से अपने कुल की कीर्ति को नष्ट कर देता है |

जो॒रहीम' मन हाथ है, तो तन कहुँ किन जाहि |
जल में जो छाया परे ,काया भीजति नाहि ||42||

मन यदि अपने हाथ में है, अपने काबू में है, तो तन कहीं भी चला जाय, कुछ बिगडने का नहीं | जैसे काया भीगती नहीं है, जल में उसकी छाया पडने पर |
[जीत और हार का कारण मन ही है, तन नहीं ः
॒मन के जीते जीत है, मन के हारे हार '|]

जो विषया संतन तजी, मूढ ताहि लपटात |
ज्यों नर डारत वमन कर, स्वान स्वाद सों खात ||43||

संतजन जिन विषय–वासनाओं का त्याग कर देते हैं, उन्हीं को पाने के लिए मूढ जन लालायित रहते हैं | जासे वमन किया हुआ अन्न कुत्ता बडे स्वाद से खाताहै |

तबही लौं जीवो भलो, दीबो होय न धीम |
जग में रहिबो कुचित गति, उचित होय॒रहीम' ||44||

जीना तभी तक अच्छा है, जबतक कि दान देना कम न हो संसार में दान–रहित जीवन कुत्सित है | उसे सफल कैसे कहा जा सकता है ?

तरुवर फल नहि खात है, सरवर पियहि न पान |
कहि॒रहीम' परकाज हित, संपति सँचहि सुजान ||45||

वृक्ष अपने फल स्वयं नहीं खाते और तालाब अपना पानी स्वयं नहीं पीते |
दूसरों के हितार्थ ही सज्जन सम्पत्ति का संचय करते हैं | उनकी विभूति परोपकार के लिए ही होती है |

थोथे बादर क्वार के, ज्यों॒रहीम' घहरात |
धनी पुरुष निर्धन भये, करैं पाछिली बात ||46||

क्वार मास में पानी से खाली बादल जिस प्रकार गरजते हैं, उसी प्रकार धनी मनुष्य जब निर्धन हो जाता है, तो अपनी बातों का बारबार बखान करता है |

थोरी किए बडेन की, बडी बडाई होय |
ज्यों॒रहीम' हनुमंत को, गिरधर कहत न कोय ||47||

अगर बडा आदमी थोडा सा भी काम कुछ कर दे, तो उसकी बडी प्रशंसा की जाती है |
हनुमान इतना बडा द्रोणाचल उठाकर लंका ले आये, तो भी उनकी कोई॒गिरिधर' नहीं कहता |
(छोटा–सा गोवर्धन पहाड उठा लिया, तो कृष्ण को सभी गिरिधर कहने लगे |)

दीन सबन को लखत है, दीनहिं लखे न कोय |

जो 'रहीम' दीनहि लखै, दीनबंधु सम होय ||48||
गरीब की दृष्टि सब पर पडती है, पर गरीब को कोई नहीं देखता | जो गरीब को प्रेम से देखता है, उसकी मदद करता है, वह दीनबन्धु भगवान् के समान हो जाता है |

दोनों 'रहिमन' एक से, जौ लों बोलत नाहि |
जान परत हैं काक पिक, ऋतु बसंत के माहि ||49||

रूप दोनों का एक सा ही है, धोखा खा जाते हैं पहचानने में कि कौन तो कौआ है और कौन कोयल | दोनों की पहचान करा देती है, वसन्त ऋतु, जबकि कोयल की कूक सुनने में मीठी लगती है और कौवे का काँव-काँव कानों को फाड देता है |
(रूप एक-सा सुन्दर हुआ, तो क्या हुआ ॐ दुर्जन और सज्जन की पहचान कडुवी और मीठी वाणी स्वयं करा देती है |)

धूर धरत नित सीस पै, कहु 'रहीम' केहि काज |
जेहि रज मुनि-पतनी तरी, सो ढूंढत गजराज ||50||

हाथी नित्य क्यों अपने सिरपर धूल को उछाल-उछालकर रखता है ? जरा पूछो तो उससे उत्तर हैः- जिस श्रीराम के चरणों की धूल से गौतम ऋषि की पत्नी अहल्या तर गयी थी, उसे ही गजराज ढूंढता है कि वह कभी तो मिलेगी |

नाद रीझि तन देत मृग, नर धन हेत समेत |
ते 'रहीम' पसु से अधिक, रीझेहु कछू न देत ||51||
गान के स्वर पर षीझ कर मृग अपना शरीर शिकारी को सौंप देता है | और मनुष्य धन-दौलत पर प्राण गंवा देता है | परन्तु वे लोग पशु से भी गये बीते हैं, जो रीझ जाने पर भी कुछ नहीं देते | (सूम का यशोगान कितना सटीक हुआ है इस दोहे में ॐ

निज कर क्रिया 'रहीम' कहि, सिधि भावी के हाथ |
पाँसा अपने हाथ में, दाँव न अपने हाथ ||52||
कर्म करना तो अपने हाथ में है, पर उसकी सफलता दैव के हाथ में है | देख लो न चौपड के खेल में-- पांसा अपने हाथ में है, पर दाँव अपने हाथ में नहीं |

पन्नगबेलि पतिव्रता , रिति सम सुनो सुजान |
हिम 'रहीम' बेली दही, सत जोजन दहियान ||53||
सज्जनो, ध्यान देकर सुनो | पान की बेल पतिव्रता की भाँति है प्रेम करने और उसे निभाने में दोनों ही समान हैं |
पान की बेल पाला पडने से जल जाती है और पतिव्रता पति के विरह में जलती रहती है |

पावस देखि 'रहीम' मन, कोइल साधे मौन |
अब दादुर वक्ता भए, हमको पूछत कौन ||54||
वर्षा ऋतु आने पर कोयल ने मौनव्रत ले लिया, यह सोचकर कि अब हमें कौन पूछेगा ? अब तो मेंढक ही बोलेंगे, उन्हीं वक्ताओं के भाषण होंगे अब |

बड माया को दोष यह , जो कबहूं घटि जाय |

तो`रहीम' मरोबो भलो, दुख सहि जियै बलाय ||55||

धन सम्पत्ति का बहुत बडा दोष यह है ः– यदि वह कभी घट जाय, तो उस दशा में मर जाना ही अच्छा है | दुःख झेल–झेलकर कौन जिये ?

बडे दीन को दुःख सुने, लेत दया उर आनि |
हरि हाथी सों कब हुती, कहु`रहीम' पहिचानि ||56||

बडे लोग जब किसी गरीब का दुखडा सुनते हैं, तो उनके हृदय में दया उमड आती है | भगवान की कब जान पहचान थी ह्यग्राह से ग्रस्तहृ गजेन्द्र के साथ ?

बडे बडाई ना करैं , बडो न बोले बोल |
`रहिमन' हीरा कब कहै, लाख टका मम मोल ||57||

जो सचमुच बडे होते हैं, वे अपनी बडाई नहीं किया करते, बडे–बडे बोल नहीं बोला करते | हीरा कब कहता है कि मेरा मोल लाख टके का है |
[छोटे छिछोरे आदमी ही बातें बना–बनाकर अपनी तारीफ के पुल बाँधा करते हैं |]

बिगरी बात बनै नहीं, लाख करौ किन कोय |
`रहिमन' फाटे दूध को, मथै न माखन होय ||58||

लाख उपाय क्यों न करो, बिगडी हुई बात बनने की नहीं | जो दूध फट गया, उसे कितना ही मथो, उसमें से मक्खन निकलने का नहीं |

भजौ तो काको मैं भजौ, तजौ तो काको आन |
भजन तजन से बिलग है, तेहि`रहीम' तू जान ||59||

भजूँ तो मैं किसे भजूं ? और तजूं तो कहो किसे तजूँ ? तू तो उस परमतत्व का ज्ञान प्राप्त कर, जो भजन अर्थात राग–अनुराग एवं त्याग से, इन दोनों से बिल्कुल अलग है, सर्वथा निर्लिप्त है |

भार झोंकि कै भार में, `रहिमन' उतरे पार |
पै बूडे मँझधार में , जिनके सिर पर भार ||60||

अहम् को यानी खुदी के भार को भाड में झोंककर हम तो पार उतर गये | बीच धार में तो वे ही डूबे, जिनके सिर पर अहंकार का भार रखा हुआ था, या जिन्होंने स्वयं भार रख लिया था

भावी काहू ना दही, भावी–दह भगवान् |
भावी ऐसी प्रबल है, कहि`रहीम' यह जान ||61||

भावी अर्थात् प्रारब्ध को कोई नहीं जला सका, उसे जला देने वाला तो भगवान् ही है | समझ ले तू कि भावी कितनी प्रवल है | भगवान् यदि बीच में न पडें तो होनहार होकर ही रहेगी |

भूप गनत लघु गुनिन को, गुनी गनत लघु भूप |
`रहिमन' गिरि ते भूमि लौं, लखौ एकै रूप ||62||

राजा की दृष्टि में गुणी छोटे हैं, और गुणी राजा को छोटा मानते हैं | पहाड पर चढ कर देखो तो न तो कोई बडा है, न कोई छोटा, सब समान ही दिखाई देंगे |

44

माँगे घटत 'रहीम' पद , किती करो बढि काम |
तीन पैड बसुधा करी, तऊ बावने नाम ||63||

कितना ही महत्व का काम करो, यदि किसी के आगे हाथ फैलाया, तो ऊँचे-ऊँचे पद स्वतः छोटा हो जायेगा | विष्णु ने बडे कौशल से राजा बलि के आगे सारी पृथ्वी को मापकर तीन पग बताया, फिर भी उनका नाम 'बामन ही रहा | (वामन से बन गया बावन अर्थात् बौना |)

माँगे मुकरि न को गयो , केहि न त्यागियो साथ |
माँगत आगे सुख लह्यो, तै 'रहीम' रघुनाथ ||64||

माँगने पर कौन नहीं हट जाता ? और, ऐसा कौन है, जो याचक का साथ नहीं छोड देता ? पर श्रीरघुनाथजी ही ऐसै हैं, जो माँगने से भी पहले सब कुछ दे देते हैं, याचक अयाचक हो जाता है | (श्रीराम के द्वारा विभीषण को लंका का राज्य दे डालने से यही आशय है, जबकि विभीषण ने कुछ भी माँगा नहीं था |)

मूढमंडली में सुजन , ठहरत नहीं बिसेखि |
स्याम कचन में सेत ज्यो, दूरि कीजियत देखि ||65||

मूर्खों की मंडली में बुद्धिमान कुछ अधिक नहीं ठहरा करते | काले बालों में से जैसे सफेद बाल देखते ही दूर कर दिया जाता है |

यद्यपि अवनि अनेक हैं , कूपवंत सरि ताल |
`रहिमन' मानसरोवरहि, मनसा करत मराल ||66||

45

यों तो पृथ्वी पर न जाने कितने कुएँ, कितनी नदियाँ और कितने तालाब हैं, किन्तु हंस का मन तो मानसरोवर का ही ध्यान किया करता है |

यह 'रहीम' निज संग लै, जनमत जगत न कोय |
बैर, प्रीति, अभ्यास, जस होत होत ही होय ||67||

बैर, प्रीति, अभ्यास और यश इनके साथ संसार में कोई भी जन्म नहीं लेता | ये सारी चीजें तो धीरे-धीरे ही आती हैं |

यह 'रहीम' माने नहीं , दिल से नवा न होय |

चीता, चोर, कमान के, नवे ते अवगुन होय ||68||

चीते का, चोर का और कमान का झुकना अनर्थ से खाली नहीं होता है | मन नहीं कहता कि इनका झुकना सच्चा होता है | चीता हमला करने के लिए झुककर कूदता है | चोर मीठा वचन बोलता है, तो विश्वासघात करने के लिए | कमान ह्यधनुषह्‌ झुकने पर ही तीर चलाती है |

यों 'रहीम' सुख दुख सहत , बडे लोग सह सांति |
उवत चंद जेहि भाँति सों , अथवत ताही भाँति ||69||

बडे आदमी शान्तिपूर्वक सुख और दुःख को सह लेते हैं | वे न सुख पाकर फूल जाते हैं और न दुःख में घबराते हैं | चन्द्रमा जिस प्रकार उदित होता है, उसी प्रकार डूब भी जाता है |

46

रन, बन व्याधि, बिपत्ति में, `रहिमन' मरै न रोय |
जो रक्षक जननी–जठर, सो हरि गए कि सोय ||70||

रणभूमि हो या वन अथवा कोई बीमारी हो या विपदा हो, इन सबके मारे रो–रोकर मरना नहीं चाहिए | जिस प्रभु ने माँ के गर्भ में रक्षा की, वह क्या सो गया है ?

`रहिमन' आटा के लगे, बाजत है दिन–राति |
घिउ शक्कर जे खात हैं , तिनकी कहा बिसाति ||71||

मृदंग को ही देखो | जरा–सा आटा मुँह पर लगा दिया, तो वह दिन रात बजा करता है, मौज में मस्त होकर खूब बोलता है | फिर उनकी बात क्या पूछते हो, जो रोज घी शक्कर खाया करते हैं ॐ

`रहिमन' ओछे नरन सों, बैर भलो ना प्रीति |
काटे चाटे स्वान के, दोउ भाँति विपरीत ||72||

ओछे आदमी के साथ न तो बैर करना अच्छा है, और न प्रेम | कुत्ते से बैर किया, तो काट लेगा, और प्यार किया तो चाटने लगेगा |

`रहिमन' कहत सु पेट सों, क्यों न भयो तू पीठ |
रीते अनरीते करै, भरे बिगारत दीठ ||73||

47

पेट से बार–बार कहता हूँ कि तू पीठ क्यों नहीं हुआ ?
अगर तू खाली रहता है, भूखा रहता है तो अनीति के काम करता है | और, अगर तू भर गया, तो तेरे कारण नजर बिगड जाती है, बदमाशी करने को मन हो आता है |
इसलिए तुझसे तो पीठ कहीं अच्छी है |

`रहिमन' कुटिल कुठार ज्यों, करि डारत द्वै टूक |
चतुरन के कसकत रहै, समय चूक की हूक ||74||

यदि कोई बुद्धिमान व्यक्ति समय चूक गया, तो उसका पछतावा हमेशा कष्ट देता रहता है |
कठोर कुठार बनकर उसकी कसक कलेजे के दो टुकडे कर देती है |

`रहिमन' चुप ह्वै बैठिए, देखि दिनन को फेर |
जब नीके दिन आइहैं, बनत न लगिहैं देर ||75||

यह देखकर कि बुरे दिन आगये, चुप बैठ जाना चाहिए | दुर्भाग्य की शिकायत क्यों और किस से की जाय ? जब अच्छे दिन फिरेंगे, तो बनने में देर नहीं लगेगी |
इस विश्वास का सहारा लेकर तुम चुपचाप बैठे रहो |

`रहिमन' छोटे नरन सों, होत बडो नहि काम |
मढो दमामो ना बनै, सौ चूहों के चाम ||76||

छोटे आदमियों से कोई बडा काम नहीं बना करता, सौ चूहों के चमडे से भी जैसे नगाडा नहीं मढा जा सकता |

48

`रहिमन' जग जीवन बडे काहु न देखे नैन |
जाय दशानन अछत ही, कपि लागे गथ लैन ||77||

दुनिया में किसी को अपने जीते–जी बडाई नहीं मिली | रावण के रहते हुए बन्दरों ने
लंका को लूट लिया | उसकी आँखों के सामने ही उसका सर्वस्व नष्ट हो गया |

`रहिमन' जो तुम कहत हो, संगति ही गुन होय |
बीच उखारी रसभरा, रस काहे ना होय ||78||

तुम जो यह कहते हो कि सत्संग से सद्‌गुण प्राप्त होते हैं | तो ईख के खेत में ईख के
साथ–साथ उगने वाले रसभरा नामक पौधे से रस क्यों नहीं निकलता ?

`रहिमन' जो रहिबो चहै, कहै वाहि के दाव |
जो बासर को निसि कहै, तौ कचपची दिखाव ||79||

अगर मालिक के साथ रहना चाहते हो तो, हमेशा उसकी`हाँ' में`हाँ' मिलाते रहो |
अगर वह कहे कि यह दिन नहीं , यह तो रात है, तो तुम आसमान में तारे दिखाओ |
(अगर रहना है, तो खिलाफ में कुछ मत कहो, और अगर साफ–साफ कह देना है, तो वहाँ से
फौरन चले जाओ`रहना तो कहना नहीं, कहना तो रहना नहीं |)

`रहिमन' तीन प्रकार ते, हित अनहित पहिचानि |
पर–बस परे, परोस–बस, परे मामिला जानि
||80||

क्या तो हित है और क्या अनहित, इसकी पहचान तीन प्रकार से होती है ः
दूसरे के बस में होने से, पडोस में रहने से और मामला मुकदमा पडने पर |

`रहिमन' दानि दरिद्रतर , तऊ जाँचिबे जोग |
ज्यों सरितन सूखा परे, कुँआ खदावत लोग ||18||

दानी अत्यन्त दरिद्र भी हो जाय, तो भी उससे याचना की जा सकती है | नदियाँ अब सूख
जाती हैं तो उनके तल में ही लोग कुएँ खुदवाते हैं |

`रहिमन' देखि बडेन को , लघु न दीजिए डारि |
जहाँ काम आवै सुई , कहा करै तरवारि ||82||

बडी चीज को देखकर छोटी चीज को फेंक नहीं देना चाहिए | सुई जहाँ काम आती है, वहाँ
तलवार क्या काम देगी ? मतलब यह कि सभी का स्थान अपना–अपना होता है |

`रहिमन' निज मन की बिथा, मनही राखो गोय |
सुनि अठिलैहैं लोग सब , बाँटि न लैहैं कोय ||83||

अन्दर के दुःख को अन्दर ही छिपाकर रख लेना चाहिए, उसे सुनकर लोग उल्टे हँसी करेंगे
कोई भी दुःख को बाँट नहीं लेगा |

`रहिमन' निज सम्पति बिना, कोउ न विपति–सहाय |
बिनु पानी ज्यों जलज को, नहिं रवि सकै बचाय
||84||

काम अपनी ही सम्पत्ति आती है, कोई दूसरा विपत्ति में सहायक नहीं होता है | पानी न
रहने पर कमल को सूखने से सूर्य बचा नहीं सकता |

`रहिमन' पानी राखिए, बिनु पानी सब सून |

पानी गए न ऊबरै , मोती, मानुष, चून
||85||
अपनी आबरू रखनी चाहिए , बिना आबरू के सब कुछ बेकार है | बिना आब का मोती बेकार,
और बिना आबरू का आदमी कौडी काम का भी नहीं, और इसी प्रकार चूने में से पानी यदि जल
गया, तो वह बेकार ही है |

`रहिमन' प्रीति न कीजिए , जस खीरा ने कीन |
ऊपर से तो दिल मिला, भीतर फांकें तीन ||86||

ऐसे आदमी से प्रेम न जोडा जाय, जो ऊपर से तो मालूम दे कि वह दिल से मिला हुआ है,
लेकिन अंदर जिसके कपट भरा हो | खीरे को ही देखो, ऊपर से तो साफ –सपाट दीखता है,
पर अंदर उसके तीन–तीन फाँके हैं |

`रहिमन' बहु भेषज करत , व्याधि न छाँडत साथ |
खग, मृग बसत अरोग बन , हरि अनाथ के नाथ
||87||

कितने ही इलाज किये, कितनी ही दवाइयाँ लीं, फिर भी रोग ने पिंड नहीं छोडा |
पक्षी और हिरण आदि पशु जंगल में सदा नीरोग रहते हैं भगवान् के भरोसे, क्योंकि वह
अनाथों का नाथ है |

`रहिमन' भेषज के किए, काल जीति जो जात |
बडे–बडे समरथ भये, तौ न कोऊ मरि जात ||88||

औषधियों के बल पर यदि काल को लकहीं जीत लिया गया होता तो, दुनिया के बडे–बडे
समर्थ और शक्तिशाली मौत के पंजे से साफ बच जाते |

`रहिमन' मनहि लगाईके, देखि लेहु किन कोय |
नर को बस करिबो कहा, नारायन बस होय ||89||

मन को स्थिर करके कोई क्यों नहीं देख लेता, इस परम सत्य को कि, मनुष्य को वश में कर
लेना तो बात ही क्या, नारायण भी वश में हो जाते हैं |

`रहिमन' मारग प्रेम को, मत मतिहीन मझाव |
जो डिगहै तो फिर कहूँ, नहि धरने को पाँव ||90||

हाँ, यह मार्ग प्रेम का मार्ग है | कोई नासमझ इस पर पैर न रखे | यदि डगमगा गये तो,
फिर कहीं पैर धरने की जगह नहीं | मतलब यह कि बहुत समझ–बूझकर और धीरज और दृढता के
साथ प्रेम के मार्ग पर पैर रखना चाहिए |

`रहिमन' यह तन सूप है, लीजे जगत पछोर |
हलुकन को उडि जान दे, गरुए राखि बटोर ||91 ||

तेरा यह शरीर क्या है, मानो एक सूप है | इससे दुनिया को पछोर लेना, यानी फटक लेना
चाहिए जो सारहीन हो, उसे उड जाने दो, और जो भारी अर्थात् सारमय हो, उसे तू रख ले |
(हलके से आशय है कुसंग से और गरुवे यानी भारी से आशय है सत्संग से, वह त्यागने
योग्य है, और यह ग्रहण करने योग्य |)

`रहिमन' राज सराहिए, ससि सम सुखद जो होय |
कहा बापुरो भानु है, तप्यो तरैयन खोय ||92||

ऐसे ही राज्य की सराहना करनी चाहिए, जो चन्द्रमा के समान सभी को सुख देनेवाला हो |
वह राज्य किस काम का, जो सूर्य के समान होता है, जिसमें एक भी तारा देखने में नहीं
आता | वह अकेला ही अपने–आप तपता रहता है |
[तारों से आशय प्रजाजनों से है, जो राजा के आतंक के मारे उसके सामने जाने की हिम्मत
नहीं कर सकते, मुंह खोलने की बात तो दूर ॐ}

`रहिमन' रिस को छाँडि के, करौ गरीबी भेस |
मीठो बोलो, नै चलो, सबै तुम्हारी देस ||93
||

क्रोध को छोड दो और गरीबों की रहनी रहो | मीठे वचन बोलो और नम्रता से चलो, अकडकर
नहीं | फिर तो सारा ही देश तुम्हारा है |

`रहिमन' लाख भली करो, अगुनी न जाय |
राग, सुनत पय पिअतहू, साँप सहज धरि
खाय ||94||

लाख नेकी करो, पर दुष्ट की दुष्टता जाने की नहीं | सांप को बीन पर राग सुनाओ, और
दूध भी पिलाओ, फिर भी वह दौडकर तुम्हें काट लेगा | स्वभाव ही ऐसा है | स्वभाव का
इलाज क्या ?

`रहिमन' विद्या, बुद्धि नहिं, नहीं धरम, जस,
दान |
भू पर जनम वृथा धरै, पसु बिन पूँछ–विषान
||95||

न तो पास में विद्या है, न बुद्धि है, न धर्म–कर्म है और न यश है और न दान भी किसी
को दिया है | ऐसे मनुष्य का पृथ्वी पर जन्म लेना वृथा ही है | वह पशु ही है बिना
पूँछ और बिना सींगो का |

`रहिमन' विपदाहू भली, जो थोरे दिन होय |
हित अनहित या जगत में, जानि परत सब कोय
||96||

तब तो विपत्ति ही अच्छी, जो थोडे दिनों की होती है | संसार में विपदा के दिनों में
पहचान हो जाती है कौन तो हित करने वाला है और कौन अहित करने वाला |

`रहिमन' वे नर मर चुके, जे कहुँ माँगन जाहि |
उनते पहले वे मुए, जिन मुख निकसत नाहि
|97||

जो मनुष्य किसी के सामने हाथ फैलाने जाते हैं, वे मृतक के समान हैं | और वे लोग तो
पहले से ही मृतक हैं, मरे हुए हैं, जो माँगने पर भी साफ इन्कार कर देते हैं |

`रहिमन' सुधि सबसे भली, लगै जो बारंबार |

बिछुरे मानुष फिर मिलैं,   यहै जान अवतार
||98||
याद कितनी अच्छी होती है,   जो बार–बार आती है | बिछूडे हुए मनुष्यों की याद ही तो
प्रभु को वसुधा पर उतारने को विवश कर देती है,   भगवान् के अवतार लेने का यही कारण है
,   यही रहस्य है |

राम न जाते हरिन संग,   सीय न रावन–साथ |
जो॒रहीम' भावी कतहुँ,   होत आपने हाथ ||99||

55
होनहार यदि अपने हाथ में होती,   उस पर अपना वश चलता,   तो माया–मृग के पीछे राम क्यों
दौडते,   और रावण क्यों सीता को हर ले जाता ॐ
रूप कथा,   पद,   चारुपट,   कंचन,   दोहा,   लाल |
ज्यों–ज्यों निरखत सूक्ष्म गति,   मोल॒रहीम' बिसाल
||100||
रूप और कथा और कविता तथा सुन्दर वस्त्र एवं स्वर्ण और दोहा तथा रतन,   इन सबका असली
मोल तो तभी आँका जा सकता है,   जबकि अधिक–से–अधिक सूक्षमता के साथ इनको देखा परखा जाय
बरु॒रहीम' कानन भलो,   वास करिय फल भोग |
बंधु मध्य धनहीन ह्वै,   बसिबो उचित न योग
||101||
निर्धन हो जाने पर बन्धु–बान्धवों के बीच रहना उचित नहीं | इससे तो वन में जाकर वस
जाना और वहाँ के फलों पर गुजर करना कहीं अच्छा है |

56
वे॒रहीम' नर धन्य हैं ,   पर उपकारी अंग |
बाँटनवारे को लगै,   ज्यों मेंहदी को रंग ||102||
धन्य है वे लोग,   जिनके अंग–अंग में परोपकार समा गया है ॐ मेंहदी पीसने वाले के हाथ
अपने–आप रच जाते हैं,   लाल हो जाते हैं |
सबै कहावैं लसकरी,   सब लसकर कहं जाय |
`रहिमन' सेल्ह जोई सहै,   सोई जगीरे खाय ||103||
सैनिक कहलाने में सभी को खुशी होती है,   सभी सेना में भरती होना चाहते हैं,   पर जीत
और जागीर तो उसी को मिलती है,   जो भाले के वार ह्यफूलों की तरह ह्र सहर्ष अपने ऊपर झेल
लेता है |
समय दशा कुल देखि कै,   सबै करत सनमान |
`रहिमन' दीन अनाथ को,   तुम बिन को भगवान
||104
सुख के दिन देखकर अच्छी स्थिति और ऊँचा खानदान देखकर सभी आदर–सत्कार करते हैं |
किन्तु जो दीन हैं,   दुखी हैं और सब तरह से अनाथ हैं,   उन्हें अपना लेनेवाला भगवान के
सिवाय दूसरा और कौन हो सकता है ॐ

समय पाय फल होत है,   समय पाय झरि जात |
सदा रहै नहि एक सी,   का`रहीम' पछितात |105||

57
क्यों दुखी होते हो और क्यों पछता रहे हो,   भाई ॐ समय आता है,   तब वृक्ष फलों से लद जाते हैं,   और फिर ऐसा समय आता है,   जब उसके सारे फूल और फल झड जाते हैं |
समय की गति को न जानने—पहचाननेवाला ही दुखी होता है |

समय—लाभ सम लाभ नहि ,   समय—चूक सम चूक |
चतुरन चित`रहिमन' लगी ,   समय चूक की हूक
||106||

समय पर अगर कुछ बना लिया,   तो उससे बडा और कौन—सा लाभ है ?
और समय पर चूक गये तो चूक ही हाथ लगती है | बुद्धिमानों के मन में समय की चूक सदा कसकती रहती है |

सर सूखे पंछी उडे,   और सरन समाहि |
दीन मीन बिन पंख के,   कहु`रहीम' कहँ जाहि
||107||

सरोवर सूख गया,   और पक्षी वहाँ से उडकर दूसरे सरोवर पर जा बसे | पर बिना पंखों की मछलियाँ उसे छोड और कहाँ जायें ?
उनका जन्म—स्थान और मरण—स्थान तो वह सरोवर ही है |

स्वासह तुरिय जो उच्चरे,   तिय है निहचल चित्त |
पूरा परा घर जानिए,   `रहिमन' तीन पवित्त ||108||

58
ये तीनों परम पवित्र हैं ः— वह स्वास,   जिसे खींचकर योगी त्वरीया अवस्था का अनुभव करता है,   वह स्त्री,   जिसका चित्त पतिव्रत में निश्चल हो गया है,   पर पुरुष को देखकर जिसका मन चंचल नहीं होता | और सुपुत्र, [जो अपने चरित्र से कुल का दीपक बन जाता है|]

साधु सराहै साधुता,   जती जोगिता जान |
`रहिमन' साँचे सूर को,   बैरी करै बखान ||109||

साधु सराहना करते हैं साधुता की,   और योगी सराहते हैं योग की सर्वोच्च अवस्था को |
और सच्चे शूरवीर के पराक्रम की सराहना उसके शत्रु भी किया करते हैं |

संतत संपति जान के ,   सब को सब कछु देत |
दीनबंधु बिनु दीन की,   को`रहीम' सुधि लेत
||110||

यह मानकर कि सम्पत्ति सदा रहनेवाली है धनी लोग सबको जो माँगने आते हैं,   सब कुछ देते हैं | किन्तु दीन—हीन की सुधि दीनबन्धु भगवान् को छोड और कोई नहीं लेता |

संपति भरम गँवाइके ,   हाथ रहत कछु नाहि |
ज्यों`रहीम' ससि रहत है,   दिवस अकासहि माहि
||111||

59

बुरे व्यसन में पडकर जब कोई अपना धन खो देता है , तब उसकी वही दशा हो जाती है, जैसी दिन में चन्द्रमा की | अपनी सारी कीर्ति से वह हाथ धो बैठता है, क्यों कि उसके हाथ में तब कुछ भी नहीं रह जाता है |

सिस संकोच, साहस, सलिल, मान, सनेह`रहीम' |
बढत–बढत बढि जात है, घटत–घटत घटि सोम ||112||

चन्द्रमा, संकोच, साहस, जल, सम्मान और स्नेह, ये सब ऐसे है, जो बढते–बढते बढ जाते हैं, और घटते–घटते घटने की सीमा को छू लेते हैं |

सीत हरत, तम हरत नित, भुवन भरत नहि चूक |
`रहिमन' तेहि रवि को कहा, जो घटि लखै उलूक ||113||

सूर्य शीत को भगा देता है, अन्धकार का नाश कर देना है और सारे संसार को प्रकाश से भर देता है | पर सूर्य का क्या दोष, यदि उल्लू को दिन में दिखाई नहीं देता ॐ

हित`रहीम' इतऊ करै, जाकी जहाँ बसात |
नहि यह रहै, न वह रहै , रहे कहन को बात ||114||

जिसकी जहाँ तक शक्ति है, उसके अनुसार वह भलाई करता है | किसने किसके साथ कितना किया, उनमें से कोई नहीं रहता | कहने को केवल बात रह जाती है |

60

होय न जाकी छाँह ढिग, फल`रहीम' अति दूर |
बाढेहु सो बिनु काजही , जैसे तार खजूर ||115||

क्या हुआ, जो बहुत बडे हो गए | बेकार है ऐसा बड जाना, बडा हो जाना ताड और खजूर की तरह | छाँह जिसकी पास नहीं, और फल भी जिसके बहुत–बहुत दूर हैं |

ओछे को सतसंग, `रहिमन' तजहु अंगार ज्यों |
तातो जारै अंग , सीरे पै कारो लगे ||116||

नीच का साथ छोड दो, जो अंगार के समान है | जलता हुआ अंगार अंग को जला देता है, और ठंडा हो जाने पर कालिख लगा देता है |

`रहीमन' कीन्हीं प्रीति, साहब को पावै नहीं |
जिनके अनगिनत मीत, समैं गरीबन को गनै ||117||

मालिक से हमने प्रीति जोडी, पर उसे हमारी प्रीति पसन्द नहीं | उसके अनगिनत चाहक हैं , हम गरीबों की साई के दरबार में गिनती ही क्या ॐ

61

`रहिमन' मोहि न सुहाय, अमी पआवै मान बनु |
बरु वष देय बुलाय, मान–सहत मरबो भलो ||118||

वह अमृत भी मुझे अच्छा नहीं लगता, जो बिना मान–सम्मान के पिलाया जाय | प्रेम से बुलाकर चाहे विष भी कोई दे दे, तो अच्छा, मान के साथ मरण कहीं अधिक अच्छा है |

10: :निज बीती

चित्रकूट में रमि रहे, `रहिमन' अवध-नरेस |
जा पर बिपदा परत है , सो आवत यहि देस ||1||

अयोध्या के महाराज राम अपनी राजधानी छोडकर चित्रकूट में जाकर बस गये, इस अंचल में वही आता है, जो किसी विपदा का मारा होता है |

ए,रहीम, दर-दर फिरहि, माँगि मधुकरी खाहि |
यारो यारी छाँडिदो, वे,रहीम' अब नाहि ||2||

रहींम आज द्वार-द्वार पर मधुकरी माँगता गुजर कर रहा है | वे दिन लद गये, तब का वह रहीम नहीं रहा | दोस्तो छोड दो दोस्ती, जो इसके साथ तुमने की थी |

देनहार कोउ और है , भेजत सो दिन रैन |
लोग भरम हम पै धरैं, याते नीचे नैन ||3||

हम कहाँ किसी को कुछ देते हैं | देने वाला तो दूसरा ही है, जो दिन-रात भेजता रहता है इन हाथों से दिलाने के लिए | लोगों को व्यर्थ ही भरम हो गया है कि रहीम दान देता है | मेरे नेत्र इसलिए नीचे को झुके रहते हैं कि माँगनेवाले को यह भान न हो कि उसे कौन दे रहा है, और दान लेकर उसे दीनता का अहसास न हो |

:: इति ::